शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 फरवरी 2015
पीअर रीव्यूड रिसर्च जर्नल

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों मे ग्रामीण स्त्री मुक्ति की अवधारणा

ज्योति देवी (शोधार्थी)
हिन्दी एवं भाषा अध्ययन विभाग
अंग्रेजी एवं विदेशी भाषा विश्व विद्यालय
हैदराबाद, आँध्रप्रदेश, भारत

शोध संक्षेप

गाँव के रंग-ढंग में रची-बसी मैत्रेयी पुष्पा ने बुंदेलखंड, ब्रज क्षेत्र, हरियाणा क्षेत्र की ग्रामीण स्त्रियों के शोषण, संघर्ष और जागरूकता को बड़ी ही बेबाकी और सहजता के साथ प्रस्तुत किया है। ग्रामीण जीवन की धूल-मिट्टी से बने अनुभव संसार मे मैत्रेयी पुष्पा ने सबसे अधिक प्राथमिकता नारी की स्थिति को ही दी है। उनका लेखन यह सिद्ध करता है की वे स्त्री-पुरुष समानता की पक्षधरता की वकालत करती है। उन्होंने ग्रामीण स्त्री के गिरने, उठने संभलने के साथ अपने लक्ष्य तक पहुचने की ऐसी इबारत रची है जो साहित्य जगत मे अवेक्षणीय है।

भूमिका

हिन्दी साहित्य की प्रत्येक विधा अपनी वैचारिकी के साथ समाज के विभिन्न परिदृश्यों को दर्शाती चलती है । लेकिन सबसे प्रत्यक्षदर्शी विधा के रूप में अपनी पहचान बनाने वाले उपन्यास में जीवन के विविध पक्ष अपनी संपूर्णता के साथ उपस्थिति होते है। उपन्यास विधा सामाजिक सरोकारों को साथ लेकर पैदा हुई , इसी समाज के साथ घर - परिवार ,स्त्री - पुरुष ,गाँव - शहर ,भी जुड़ते चले गए। यूँ तो हिन्दी उपन्यासों मे ग्रामीण जीवन की अभिव्यक्ति बीसवीं सदी के प्रारम्भ में ही दिखाई देने लगती है, परंतु भारतीय ग्रामीण समाज का उम्दा स्वरूप प्रेमचंद के उपन्यासों मे ही देखने को मिलता है । इसके पश्चात फणीश्वर नाथ रेणु , रांगेय राघव , नागार्जुन , शिवपूजन सहाय , मार्कण्डेय , अमरकांत , श्री लाल शुक्ल आदि ने इस परंपरा को आगे बढ़ाते हुए ग्रामीण समाज की विविधताओं , समस्याओं को दर्शाया। इस प्रकार सामाजिकता के यथार्थ रूप की प्रस्तुति उपन्यासों का मुख्य विषय बनता चला गया । हजारी प्रसाद दिवेदी के शब्दों मे कहें तो - " उपन्यास का जन्म ही समाज की परिस्थितियों के भीतर हुआ है। उपन्यास किसी देश के साहित्यिक विचारो की प्रगति को समझने के उत्तम साधन माने जाते हैं। क्योंकि जीवन की यथार्थता ही उपन्यास को आगे बढ़ाती है। मनुष्य के पिछड़े हुए आचार - विचारों और बढ़ती हुई यथार्थताओं के बीच निरंतर उत्पन्न होती रहने वाली खाई को पाटना ही उपन्यास का कर्तव्य है।"1

भारत की आत्मा कहलाने वाले भारतीय गाँवो की स्थिति स्वतंत्रता के पश्चात अत्यंत दयनीय हो गई थी। जातिगत असमानता, भेदभाव, छुआछूत, रूढ़ियों, परंपराओं नारी शोषण, अशिक्षा आदि

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 फरवरी 2015
पीअर रीव्यूड रिसर्च जर्नल

समस्याओं से जूझते भारतीय गाँवों का जन - जीवन अस्त-व्यस्त होता जा रहा था। लोग गाँव छोड़कर शहरों की ओर पलायन करने लगे थे। समाजशास्त्रीय अध्ययन करते हुए सत्यव्रत सिद्धांतालंकार ने ग्रामीण जीवन की स्थिति के विषय मे लिखा है, "जितना अंधविश्वास भारत की ग्रामीण जनता में है, उतना अन्य कहीं नहीं पाया जाता। ग्रामों के रीति-रिवाज उनकी प्रथाएँ सब पुराने जमाने की हैं। --- ग्रामों के जोहड़ , उनकी सडकें, गंदी नलियाँ, जगह-जगह गंध बिखेर देना ये सब आदतें उन्होंने सदियों से पायी है। जिन्हें वे बदलने के लिए तैयार नही होते।"2

उपन्यासों मे ग्रामीण स्त्री मुक्ति की अवधारणा

ग्रामीण जीवन की चितेरी मैत्रेयी पुष्पा ने ऐसे ही गावों के अनुभवों , विचारो संघर्षों को दर्शाते हुए गाँव की अनेक मुखी विसंगतिओं को उद्घाटित किया है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात नए ग्रामीण भारत के पारिवारिक, सामाजिक, राजनीतिक जीवन के यथार्थ चित्र मैत्रेयी पुष्पा ने जिस रूप में प्रस्तुत किए हैं वह उनकी ग्रामीण अनुभूति की प्रखरता को दर्शाता है। जिसके विषय मे उन्होंने स्वयं ही लिखा है - "सच तो यह है कि जो चीजें साहित्यकार के अंदर रच-बस जाती है वह उनसे निकल नहीं पाता या निकलना नहीं चाहता। गाँव भी मुझमें रचा-बसा है, मै उससे निकलना नहीं चाहती। आज भी मैं हर साल गाँव जाती हूँ --- मेरा बचपन, संघर्ष भरा जीवन गाँव मे ही बीता है तो लिखते समय वही सब मन में घूमता रहता है।"3

मैत्रेयी पुष्पा ने ग्रामीण स्त्री की घुटन, टूटन, संघर्ष, संवेदना को बड़ी ही सजीवता के साथ दर्शाते हुए लिखा है - "जहाँ औरत के लिए सुरक्षा के नाम पर सामन्ती व्यवस्था आज भी है, जहाँ पुरुष वर्चस्व के दायरे में रहती हुई वह खेत-खलिहान में जी-जान से मेहनत करती है, एकदम बैल की तरह। घर को पालती है गाय के स्वभाव से और किसी अंधेरे कोने में बलात्कृत होती है चुप रहने के लिए। वहाँ गुहार-पुकार के लिए कोई झरोखा नहीं खुलता।"4

मैत्रेयी पुष्पा के सभी नारी पात्र भी इन्हीं समस्याओं से जूझते नजर आते हैं। उनके पहले उपन्यास 'बेतवा बहती रही' में उर्वशी अपने ही भाई द्वारा दस बीघे खेत के एवज में पिता की उम्र के बरजोर सिंह के साथ ब्याह दी जाती है वही 'इदन्नमम 'की मन्दाकिनी अपने ही रिश्तेदार कैलाश मास्टर द्वारा बलात्कृत होती है तथा कुसमा भाभी पति यशपाल द्वारा उपेक्षित की जाती है। 'झूला नट' की शीलो दिन-रात घर का कामकाज करती हुई दरोगा पति सुमेर सिंह के प्यार की बाट जोहती हुई उसकी उपेक्षा का शिकार होती है। 'चाक' उपन्यास की रेशम पति के मरने के पश्चात गर्भ धारण करने के अपराध में पिठौरा में जेठ डोरिया द्वारा मार दी जाती है, वहीं सारंग घर गृहस्थी के बोझ के साथ पति रंजीत के द्वारा मारी-पीटी जाती है। गुलकन्दी प्यार करने के अपराध में अपनी माँ और पति विशनदेवा के साथ चचेरे भाई द्वारा जलाकर मार दी जाती है । अल्मा कबूतरी उपन्यास की भूरी , कदमबाई , और अल्मा जैसी नारियां पुरुष रूप में राजनेताओं, सिपाहियों अफसरों की शारीरिक संतुष्टि का साधन बनतीं हैं। अगनपाखी उपन्यास की भुवन पारिवारिक घुटन में जीने के लिएँ विवश होती है। गुनाह बेगुनाह की इला चौधरी ,समीना जैसी पुलिस सिपाही पुरुष सत्ता के

शोषण की शिकार घर बाहर दोनों जगह होती हैं। फरिश्ते निकले की बेला बहू भारत सिंह द्वारा राजनीतिक मोहरा बनाकर पाँच भाइयों के शारीरिक संतुष्टि का माध्यम बनती है।

मैत्रेयी पुष्पा के उपर्युक्त सभी नारी पात्रों की यातनाएं ग्रामीण समाज की नारियों की स्थिति बयाँ करते हैं। यह स्थिति किसी एक मन्दाकिनी, उर्वशी, सारंग, रेशम या बेला बहू की नहीं है बल्कि ग्राम समाज की उन तमाम स्त्रियों की दास्तां है जो घर की चार दीवारी के अंदर शोषित होती रहती हैं कभी धर्म के नाम पर कभी मर्यादा के नाम पर तो कभी रिश्तों के नाम पर। मैत्रेयी पुष्पा के इन सहजता भरे चरित्रों को देखकर सीमोन द बोउआ के ये शब्द याद आते है कि "स्त्री होती नहीं बना दी जाती है।" सदियों से पितृ सत्तात्मक समाज की जकड़न ने स्त्री को चार दीवारी में कैद , पर्दे घूँघट मे दबा -छिपा कर रखा, पैदा होते ही घर गृहस्थी में रमना सिखाया , पिता , भाई , पति , पुत्र जैसे अंगरक्षकों को हमेशा उसके आस पास रखा गया। उसके मन मस्तिष्क और शरीर पर हमेशा पुरुष का ही अधिकार रहा। लेकिन परिवर्तन जैसे शाश्वत नियम के साथ नारी जीवन मे चेतना का विकास हुआ। आजादी की लड़ाई में महात्मा गांधी ने स्त्रियों की सहभागिता को महत्व दिया, जिसके परिणाम स्वरूप स्वतंत्रोत्तर भारत में सरोजनी नायडू, इन्दिरा गांधी जैसी महिलाएँ देश के सर्वोच्च पदों की हकदार बनीं। उसी परंपरा मे आज भी प्रतिभा पाटिल, मायावती, जयललिता, सुषमा स्वराज, किरण बेदी जैसी महिलाएँ सामने आ रही हैं। बीसवीं सदी के सातवें दशक में शुरू हुए स्त्री मुक्ति के आन्दोलनों के बाबजूद आज भी सच्चाई यह है की अपनी पहचान बनाने वाली या अपने नाम से जानी जाने वाली स्त्रियों की संख्या सिर्फ दस प्रतिशत ही दिखाई देती है। उत्तर आधुनिक विमर्श, विश्वग्राम की परियोजना, स्त्री विमर्श के चलते भी आज ग्रामीण नारी प्राचीन परंपराओं को ढोती नजर आती है। आज भी वह सामाजिक बंधनों को तोड़ पाने का साहस नहीं कर पाती। वह पिता, पति, पुत्र की खुशी के लिए ही अपने जीवन की सार्थकता समझती है।

'चाक' उपन्यास में मैत्रेयी पुष्पा ने बड़ी ही सजीवता से ग्रामीण महिलाओं की इस मानसिकता को चित्रित किया है - "धुंधी के बेटा की बहू को पीलिया हो गया है ,दवा खाती है, आज दवा नही खाएगी, दवा के साथ पानी भी तो जायगा, ब्रत खंडित हो जायगा। एक दिन में मर तो नहीं जाएगी। देख लो चरन सिंह के बेटा की बहू को पेट फाड़कर ऑपरेशन हुआ था, कल ही गाड़ी में धरकर लाये है, पर ब्रत नहीं तोड़ा। निर्जला रही है, कहती है, हम मर जाएँ तो हमारा सौभाग्य। सुहागिन मरना कितनों को मिलता है? पति के कंधों पर चढ़कर चिता तक जायेंगे, मुँह से पानी की बूँद तक नहीं छुंवाइ।"5

ग्रामीण समाज स्त्री के प्रति जिस मानसिकता का पक्षधर है वह उसे सीता ,सावित्री तथा पतिव्रता नारी के रूप में ही देखना चाहता है। पुरुष प्रधान समाज में अनपढ़ नारी की स्थिति और उसमे उगती मुक्ति की आकांक्षा के बीज मैत्रेयी पुष्पा जैसी रचनाकार की दृष्टि पाकर पल्लवित - पुष्पित होते हुए वट वृक्ष की तरह खड़े हो रहे हैं। स्त्री-पुरुष समानता की पक्षधर मैत्रेयी पुष्पा ग्रामीण नारी के अस्तित्व और पहचान की बात स्पष्ट लहजे में करती हैं। शरद सिंह के शब्दों मे कहें तो - "हिन्दी के आधुनिक साहित्य में वे उस

लाइट हाउस की भाँति हैं जो विमर्श के नाम पर दिग्भ्रमित होने वालो को सही रास्ता दिखाती है । मैत्रेयी पुष्पा के साहित्य को पढ़ना स्त्री जीवन से होकर गुजरने जैसा है ।"6

मैत्रेयी पुष्पा ने सिर्फ नारी की दयनीयता को दर्शाते हुए अपनी लेखनी नहीं चलाई बल्कि एक जागरूक रचनाकार की दृष्टि का परिचय देते हुए ऐसी नारी को भी रचा है जो अपनी पहचान बनाने के लिए स्त्री संबंधी सारी लक्ष्मण रेखाओं को तोड़ने का साहस रखती है। एक साहित्यकार का उद्देश्य सामाजिक समस्याओं को दर्शाना ही नहीं होता उन समस्याओं से मुक्ति के लिए दिशा देना भी होता है। सत्तर के दशक में निकली स्त्री मुक्ति की बात को मैत्रेयी पुष्पा बहुत दूर तक ले जा चुकी है। हजारी प्रसाद दिवेदी ने लिखा है - "स्त्री की सफलता पुरुष को बाँधने में है, किन्तु सार्थकता पुरुष से मुक्ति में है।"7

मैत्रेयी पुष्पा के नारी पात्र भी पुरुष की गुलामी कर अपना जीवन सफल नहीं करना चाहते बल्कि अपने अस्तित्व की बात करते हुए नए रास्तों का निर्माण करते हैं। मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों मे नारी जागरण के कुछ ऐसे अंगारे दहकते मिलते हैं जो समाज की नजरों में भले ही निकृष्ट नारी की संज्ञा से नवाजे जाएँ परंतु इसे वे अपने अस्तित्व और अधिकार की लड़ाई समझतीं हैं। मन्दाकिनी, सारंग, रेशम, बेला बहू, कलावती चाची जैसे पात्र इसके उदाहरण स्वरूप देखे जा सकते हैं। विधवा रेशम गर्भ धारण करती है, उसकी सास उसे चरित्रहीन कहकर बच्चा गिरवाने की बात कहती है इस बात को सुनकर वह जो उत्तर अपनी सास को देती है वह स्त्री जागरूकता का प्रत्यक्ष प्रमाण सिद्ध होता है। वह कहती है - "आज को तुम्हारा बेटा मेरी जगह होता तो पूछती कि तू किसके साथ सोया था ? अब उसकी बांह गह ले। मेरे मरे पीछे तेरहीं तक का सबर न करता और ले आता दूसरी, तुम खुश होती कि पूत की उजड़ी जिंदगी बस गयी। पर मेरा फजीता करने पर तुली हो।"8

रेशम के अलावा कलावती चाची, सारंग जैसी स्त्रियाँ भी अपनी जेब में बिछियाँ धरे फिरती हैं जब मन आया तो पहन लिए। मैत्रेयी पुष्पा के ये विचार ग्रामीण स्त्रियों के अपने देह संबंधी विचारों की स्वतंत्रता को दर्शाते हुए पुरुष सत्ता को बहिष्कृत करते दिखाई देते हैं। मैनेजर पाण्डेय ने इस संदर्भ मे लिखा है - "चाक में गाँव की ऐसी स्त्री की संघर्ष कथा है जो अपनी देह को पुरुष ,घर, परिवार और समाज की आबरू की ध्वजा गाड़ने वाली जमीन मानने की मानसिकता को अस्वीकार करती है।"9

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों मे सारंग अपने पति के रहते हुए श्रीधर मास्टर के साथ संबंध बनाकर सारी लक्ष्मण रेखाओं को तोड़ती है वहीं 'इदन्नमम' की मन्दाकिनी कुंवारी रहकर समाज सेवा के काम मे आगे बढ़कर नयी लीक बनाती है। कहीं ईसुरी फाग की रज्जो ईसुरी की फागों की इतनी दीवानी हो जाती है कि पति और समाज की परवाह न करते हुए ईसुरी से मिलने जाती है। पति के छोड़कर चले जाने पर गाँव के शोहदों से बचने के लिए कमर में चाकू खोसकर चलती है। ग्रामीण नारी पढ़ी-लिखी भले ही न हो पर सामाजिक समझ की धनी होती है। अगन पाखी की भुवन अपने हक के लिए अपने ही जेठ को कोर्ट तक खीच कर ले आती है तो झूला नट की शीलो पति द्वारा दूसरी औरत रख लेने पर अपने देवर बालकिशन के साथ पत्नी की हैसियत

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 फरवरी 2015
पीअर रीव्यूड रिसर्च जर्नल

से रहती तो है पर बछिया नहीं कराती और अपने पति और देवर दोनों की जायदाद मे अपना हक बनाए रखती है। गुनाह-बेगुनाह की इला और समीना जैसी ग्रामीण क्षेत्र की लड़कियाँ घर परिवार के बंधन काटकर पुलिस जैसे पुरुषों के अधिकार क्षेत्र में अपना वर्चस्व स्थापित करती हैं तो फाइटर की डायरी उपन्यास की तमाम लड़कियाँ शादी जैसी परंपरा को नकारते हुए अपनी पहचान को वरीयता देते हुए सामाजिक रूढ़ियों को तोड़कर संवेदी पुलिस में भर्ती होकर आगे बढ़ रहीं हैं। फरिश्ते निकले की बेला बहू माँ न बन पाने के कारण अपने पति को छोड़कर भारत सिंह के पास चली आती है और भारत सिंह का विश्वासघात देखकर पांचों भाइयों को आग लगाकर मार डालती है, फूलन देवी अपनी इज्जत के साथ खिलवाड़ करने वालो को खुलेआम गोली मार देती है, लोगड़िया समाज की उजाला अपने बलात्कारियों का लिंग काट देती है। अल्मा कबूतरी उपन्यास में कबूतरा समाज की भूरी अपने बेटे रामसिंह को चार अक्षर सिखाने के लिए हजारों पुरुषों के नीचे से निकल जाने का माद्दा रखती है वहीं अल्मा अपने पिता की हत्या का बदला और कबूतरा जाति के हित के लिए डाकू श्री राम शास्त्री जो आत्म समर्पण कर समाज कल्याण मंत्री है के साथ शादी कर, हत्या करवा कर स्वयं मंत्री बन जाती है।

पाश्चात्य विचारक बेस नेट का हवाला देते हुए प्रभा खेतान ने लिखा है- "न जाने इन महलों की नीव मे कितनी मीराएँ सोई हैं। उनमें से यदि एक अंगारा दहक उठे तो आप समझिए, स्त्री समाज आमूल रूप से परिवर्तित हो जायगा। राख के ढेर में यदि एक ही अंगारा बचा हो तो वह सौ दीयों को जलाने की क्षमता रखता है।"10

निष्कर्ष

मैत्रेयी पुष्पा के स्त्री पात्र ग्रामीण समाज की परम्परागत रूढ़ियों को तोड़ने वाली शक्ति को सामने लेकर आते हैं, भले ही अक्षिशा और शोषण भरे ग्रामीण नारियों मे किसी एक ही अंगारे की दहक दिखाई देती हो लेकिन उसी अंगारे को आधार बनाकर मैत्रेयी पुष्पा सौ दीयों को जलाने की कोशिश करतीं हैं। भले ही महिला आरक्षण और स्त्री विमर्श की जद्दोजहद ने नारियों के लिए नए रास्तों का निर्माण किया हो पर जो है उससे बेहतर चाहिए के इरादे लेकर मैत्रेयी पुष्पा की ग्रामीण नारी साम, दाम, दंड, भेद की नीति को अपनाते हुए अपने अस्तित्व की लड़ाई स्वयं लड़ रहीं है। उनकी नारी रोटी ,कपड़ा और सामाजिक सुरक्षा के लिए अपने आपको पुरुष की दासी नही बनाना चाहती बल्कि पुरुष के कंधे से कंधा मिलाकर सहभागी जीवन व्यतीत करना चाहती है। वह पिता, पति ,पुत्र के नाम से नहीं बल्कि अपनी पहचान स्वयं बना रही है। मैत्रेयी पुष्पा के नारी पात्र अबला या नीर भरी नारी नहीं बल्कि नर से भरी नारी के रूप में समकालीन समाज की मांगों को पूरा करतीं हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1 सं. मुकुन्द द्विवेदी हजारी प्रसाद द्विवेदी रचनावली, भाग 10 - पृ. 148

2 सत्यव्रत सिद्धांतालंकार, समाजशास्त्र के मूल तत्व, पृ. 27

3 सं. - विजय बहादुर सिंह, मैत्रेयी पुष्पा स्त्री होने की कथा, पृ.85

4 मैत्रेयी पुष्पा, गुड़िया भीतर गुड़िया, पृ.326

5 मैत्रेयी पुष्पा, चाक, पृ.188

6 शरद सिंह, हंस पत्रिका, नवम्बर 2010, सं. राजेन्द्र यादव ।

7 हजारी प्रसाद दिवेदी, बाण भट्ट की आत्मकथा, पृ० - 36 ।

8 मैत्रेयी पुष्पा, चाक, पृ. 19

9 चाणक्य विचार पत्रिका, मई 2009 मैत्रेयी पुष्पा विशेषांक, पृ. 9

10 सं. राजेन्द्र यादव , प्रभा खेतान, पितृसत्ता के नए रूप - पृ.14